|| श्रीहरिः ||
वसुदेवसुतं देवं कंसचाणूरमर्दनम् |
देवकीपरमानन्दं कृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् ||

|| श्रीमद्भगवद्गीता विवेचन सारांश ||

अध्याय 14: गुणत्रयविभागयोग

1/2 (श्लोक 1-13), रविवार, 25 दिसंबर 2022

विवेचक: गीता विशारद श्री श्रीनिवास जी वर्णेकर

यूट्यूब लिंक: https://youtu.be/_4-vyfG4aRk

त्रिगुणों में ही स्वयं का अस्तित्व

प्रस्तावना :- गीता परिवार की परंपरा के अनुसार आज के विवेचन का आरंभ भगवान श्रीकृष्ण की स्तुति, गुरु वन्दना, प्रार्थना और दीप प्रज्वलन से हुआ। सदगुरु स्वामी गोविंद देव जी महाराज से जो ज्ञान के कणों का प्रसाद मिला है, वही सब को वितरण करते हुए यह कार्य कर रहे हैं क्योंकि प्रसाद को कभी अकेले नहीं खाना चाहिए, इसको सबको बाँट कर ही खाना चाहिए। पूज्य स्वामी जी के वचनों को प्रसाद के रूप में बाँटने का ही यह छोटा सा प्रयास है। गीता परिवार द्वारा गीता का प्रचार एवं प्रसार करने हेतु इस कड़ी में गीता के अट्ठारह अध्यायों को चार स्तरों में कहा गया है। इसमें पहले स्तर में बारहवें और पंद्रहवें अध्याय और दूसरे स्तर में नवम, चौदहवें, सोलहवें और सत्रहवें अध्याय हैं। इसी स्तर के चौदहवें अध्याय जिसका नाम "**गुणत्रयविभागयोग**" है, उसी का चिंतन करते हैं। इसमें तीन गुणों को बताया गया है। जिस ज्ञान को प्राप्त करके सभी मुनियों ने परम सिद्धि और साक्षात परमात्मा को ही प्राप्त कर लिया है। यही ज्ञान भगवान ने इस अध्याय में विस्तार से बताया है।

14.1

श्रीभगवानुवाच
परं(म्) भूयः(फ्) प्रवक्ष्यामि, ज्ञानानां(ञ्) ज्ञानमुत्तमम्।
यज्ज्ञात्वा मुनयः(स्) सर्वे, परां(म्) सिद्धिमितो गताः॥14.1॥

श्रीभगवान बोले – सम्पूर्ण ज्ञानों में उत्तम (और) श्रेष्ठ ज्ञान को मैं फिर कहूँगा, जिसको जानकर सब के सब मुनि लोग इस संसार से (मुक्त होकर) परमसिद्धि को प्राप्त हो गये हैं।

विवेचन :- भगवान अर्जुन से कहते हैं! हे अर्जुन ज्ञान में भी सर्वोत्तम यह उत्तम ज्ञान है। तेरहवें अध्याय को ज्ञान प्रधान अध्याय कहा गया है। इसमें भगवान ने मुख्य ज्ञान बताया है।
इस अध्याय का नाम है "**क्षेत्रक्षेत्रज्ञविभागयोग।** "
श्रीभगवान कहते हैं- हे अर्जुन! एक ही परमात्मा है जो सर्वत्र है। उसी परमात्मा को क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ दो भागों में विभाजित किया है। **क्षेत्र**- यह सारा संसार, **क्षेत्रज्ञ**- उसको व्यापक करने वाले परमात्मा, इसमें क्षेत्र के बारे में भगवान और अधिक विस्तार से बताना चाहते हैं, क्योंकि जब तक हम इस प्रकृति को ही नहीं जानेंगे, तो उसके परे जो परमात्मा है (**आत्मतत्त्व**) उसको हम समझ नहीं पाएंगे। हमारा शरीर प्रकृति का बना हुआ है। इसलिए भगवान अर्जुन को इसी प्रकृति का ज्ञान कराते हैं। भगवान

कहते हैं कि इसी उत्तम ज्ञान को मैं तुम्हें बार-बार बता रहा हूं। भगवान भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, गणित या कला का ज्ञान नहीं देंगे, वह तो हमारी उपजीविका का विज्ञान है। इस ज्ञान से हम अपनी उपजीविका चलाते हैं। भगवान कहते हैं कि जो ज्ञान में सबसे उत्तम ज्ञान हैं वही मैं तुम्हें फिर से बताऊंगा। भगवद्गीता श्रीकृष्ण और अर्जुन के बीच में संवाद है। इसमें किसी भी महत्वपूर्ण बात को बार-बार दोहराया जाता है, क्योंकि एक बार में सारी बातें समझ में नहीं आ सकती। जैसे भगवद्गीता ही हमें एक बार में पढ़कर समझ नहीं आ सकती। भगवद्गीता एक योग शास्त्र है और इसका अभ्यास हमें यथा शक्ति निरंतर करते रहना चाहिए। बार-बार उसी को करना यही तो अभ्यास है। और जितना हम अभ्यास करते जाएंगे उतने ही हम इसको समझ पाएंगे। जिस प्रकार हम क्रिकेट खेलते हैं और उसी का अभ्यास करते हैं, कि कैसे हमें बैटिंग करनी है और कैसे बॉलिंग करनी है। जब हम इसे बार-बार करते हैं तो यह अच्छे से हो जाता है और हमारे भीतर उतरने लगता है। इसी प्रकार हमें गीता का अभ्यास करना है उसे भी हमें बार-बार दोहराना पड़ता है। जैसे हम प्रतिदिन स्नान करते हैं क्योंकि जो मैल हमारे शरीर पर प्रतिदिन आती है, उसे प्रतिदिन धोना पड़ता है। इसी प्रकार हमारे शरीर के अंतरंग में भी, हमारे मन में बहुत सारा संसार का मैल बैठ जाता है। अत: मन की स्वच्छता के लिये गीता रूपी जल का स्नान प्रतिदिन करना चाहिए। नित्य ही किसी न किसी श्लोक का चिंतन करना चाहिए। इसीलिए भगवान हमें बार-बार यही बताते हैं। जिसको समझ कर बहुत से मुनियों ने परम सिद्धि को प्राप्त कर लिया है।

अणिमा, महिमा, गरिमा यह बहुत सारी सिद्धियां है, परन्तु इसमें परम सिद्धि यानी परमात्मा की प्राप्ति सबसे महत्वपूर्ण है।

14.2

इदं(ञ्) ज्ञानमुपाश्रित्य, मम साधर्म्यमागताः।
सर्गेऽपि नोपजायन्ते, प्रलये न व्यथन्ति च॥14.2॥

इस ज्ञान का आश्रय लेकर (जो मनुष्य) मेरी सधर्मता को प्राप्त हो गये हैं, (वे) महासर्ग में भी पैदा नहीं होते और महाप्रलय में भी व्यथित नहीं होते।

विवेचन :-भगवान कहते हैं कि इस ज्ञान के आश्रय में रहने वाला, इस पर चिंतन करने वाला और मनन करने वाले मनुष्य मेरे जैसे ही बन जाते हैं। इस ज्ञान को प्राप्त करके नर भी नारायण हो जाते हैं भगवान ने हमें यदि स्मरण शक्ति दी है तो विस्मरण शक्ति भी दी है, इससे हम सारी बातें भूलते जाते हैं। भगवान के गुणधर्म कैसे हैं? क्या परमात्मा पैदा होते हैं? नहीं, परमात्मा का कभी भी जन्म नहीं होता। उनके लिए एक ही काल होता है वर्तमान काल, भूतकाल, भविष्य काल परमात्मा के लिए नहीं है। जब सृष्टि का आरंभ होता है, प्रकृति का निर्माण होता है। परंतु परमात्मा हमेशा रहते हैं। प्रलय काल आने पर भी व्यथित नहीं होते। उनको समाप्त होने का भी कोई भय नहीं है, क्योंकि वह इस ज्ञान का आश्रय लेकर रहता है। वह स्वयं को भी जानता है, और अपने स्वरूप को भी जानता है कि मैं कौन हूं? श्री रामदास स्वामी ने ज्ञान की बहुत ही सुंदर व्याख्या की है (पाढ़े अपना से अपना---) स्वयं में स्वयं के स्वरूप को देखना, यही ज्ञान है और जिसको यह ज्ञान प्राप्त हो गया, उसको न मृत्यु का भय और न ही जन्म का भय होता है। वह जन्म मरण के बंधन से मुक्त हो जाता है क्योंकि भगवान कहते हैं कि वह मेरे जैसा बन गया है। ज्ञानेश्वर भगवान जी कहते हैं कि यह ज्ञान प्राप्त होने से इस देह का होना ही मूल अज्ञान है। यदि ऐसा हमें लगता है इसे देहात्म बुद्धि कहते हैं। मैं यह शरीर हूं ऐसा हमें लगता है, परंतु यह अज्ञान है। मैं हूं इसलिए तुम हो। यह भेद ही समाप्त हो जाता है। जब मनुष्य का सारा अहंकार नष्ट हो जाता है तभी मनुष्य को ज्ञान की प्राप्ति होती है। फिर जो बचता है वह एक ही दिखता है। परमात्मा सर्वत्र उसको एक ही दिखाई देता है।

14.3

मम योनिर्महद्ब्रह्म, तस्मिन्गर्भं(न्) दधाम्यहम्।
सम्भवः(स्) सर्वभूतानां(न्), ततो भवति भारत॥14.3॥

हे भरतवंशोद्भव अर्जुन! मेरी मूल प्रकृति तो उत्पत्ति स्थान है (और) मैं उसमें जीवरूप गर्भ का स्थापन करता हूँ। उससे सम्पूर्ण प्राणियों की उत्पत्ति होती है।

विवेचन :- भगवान कहते हैं - मम यानि मैं और योनि यानी गर्भधान करने का स्थान। मैं यदि ब्रह्म हूं तो यह महद्ब्रह्म है। यह मेरी

प्रकृति है, यह ही मेरी माया है। उसमें मैं गर्भाधान करता हूं। चैतन्य स्वरूप भगवान से जब प्रकृति का मिलन होता है, तब सारे भूत मात्र का निर्माण हो जाता है। अनेक प्रकार के प्राणियों का निर्माण हो जाता है। यह मूल माया है। भगवान कहते हैं, यह मेरी माया है। इसका निर्माण भी परमात्मा से ही हुआ है। इसको भी बहुत सारे नामों से पुकारा जाता है जैसे प्रकृति, माया, महद्ब्रह्म। उसी प्रकार भगवान के असंख्य नाम है। अज्ञान क्या है ? स्वयं ही स्वयं को भूल जाना। यही अज्ञान है। मनुष्य कभी-कभी अपने देह रुप को भी भूल जाता है कि मैं कौन हूँ? मैं क्या हूँ? और मेरा क्या स्वरूप है, और क्या मेरी प्रतिष्ठा है। इस अज्ञान को खत्म करने के लिए परमात्मा को समझना चाहिए। यह माया कैसी है। भगवान कहते हैं वह मेरी गृहणी है।

ज्ञानेश्वर महाराज जी कहते हैं। यह अनादि है, कब से है पता ही नहीं है। यह नित्य तरुणी है, नित्य नूतन है, इसमें रोज ही नयापन आता है। इसका वर्णन नहीं किया जा सकता। जैसे संसार का वर्णन कोई नहीं कर सकता, कि कितना बड़ा है। माया त्रिगुणी है। यह तीन गुणों से निर्मित है।

इसी प्रकार योनि भी चार प्रकार की है। अंडज, श्वेतज, उद्विज, जारज। इनसे ही जीवों का निर्माण हो जाता है। कुछ जीवो का निर्माण अंडे से होता है, कुछ निर्माण स्वेद से होता है। सबसे अलग अलग प्रकार के जीवों का निर्माण होता है। इन्हीं से असंख्य, यानि चौरासी लाख योनियों का निर्माण हुआ है। प्रकृति और माया के संयोग से ही यह निर्माण हुआ है। यही हमारे परम पिता और माता है। ज्ञानेश्वर महाराज जी कहते हैं कि यह विश्व ही उनका बालक है।

14.4

सर्वयोनिषु कौन्तेय, मूर्तयः(स्) सम्भवन्ति याः।
तासां(म्) ब्रह्म महद्योनि:(र्), अहं(म्) बीजप्रदः(फ्) पिता॥14.4॥

हे कुन्तीनन्दन! सम्पूर्ण योनियों में (प्राणियों के) जितने शरीर पैदा होते हैं, उन सबकी मूल प्रकृति तो माता है (और) मैं बीज-स्थापन करने वाला पिता हूँ।

विवेचन :- सभी योनियां, चौरासी लाख, या हो सकता है इससे भी ज्यादा हों। जो सारी मूर्तियां हैं, यानी अलग-अलग प्रकार के आकार जो हैं। कई प्रकार के प्राणी हैं, कई प्रकार की मछलियां, अनेक प्रकार के जीव हैं। उन सब की माता, यह माया ही है, और मैं उन सब का बीज प्रदान करने वाला पिता हूं। परमात्मा पिता है और प्रकृति माता है। इन दोनों माता-पिता ने मिलकर यह संसार बनाया है। भगवान ने सबसे पहले इन्ही माता-पिता का परिचय कराया है। स्वयं को जानने से पहले माता पिता का परिचय जरूरी है और बताया सृष्टि ही इनकी संतान है। भगवान कहते हैं कि शरीर की आकृति चाहे कैसी भी हो, उन्हें अलग नहीं मानना चाहिए, क्योंकि उनके माता-पिता तो एक ही हैं। यही हमारे परम पिता है। भगवान कहते हैं, हे अर्जुन! क्या तुम मेरा और प्रकृति का संबंध क्या है, यह जानना चाहते हो?

ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं - मिट्टी से घड़ा बन गया, कपास से धागा बना फिर उसका वस्त्र बना। यानि मिट्टी तो घड़े की माता हो गई और वस्त्र, कपास से ही बनता है, अत: पोता हो गया। भगवान कहते हैं कि ऐसे ही मेरा और प्रकृति का भी निकट का संबंध है, क्योंकि सारे विश्व का निर्माण ही मुझ से हुआ है। भगवान कहते हैं यदि सोने के आभूषण बन जाए तो क्या सोना नष्ट हो सकता है? सोना तो सोना ही रहेगा। वह तो सोने के आभूषण में दिख रहा है। वैसे ही उसी परमात्मा से सारा विश्व बना है और परमात्मा भी उस में ही है। अभी हम अज्ञानी हैं और हमारे चक्षु खुले नहीं हैं इसीलिए हमें परमात्मा के दर्शन नहीं हो रहे हैं। जैसे सोने के आभूषण को देखकर हम यह नहीं कह सकते कि यह सोना नही है वैसे ही इस विश्व में परमात्मा तो है परंतु अज्ञानता के कारण हमें दिखाई नहीं देते। उन के दर्शन होना यही ज्ञान चक्षु खोलना है। ज्ञानेश्वर भगवान कहते हैं कि आप यह मत देखना कि भगवान चतुर्भुज रूप में हमें दिखेंगे क्योंकि यह विश्व ही उसका रूप है। ग्यारहवें अध्याय में विश्वरूप दर्शन के बारे में कहा है कि विश्व में ही परमात्मा का दर्शन है। सर्वत्र परमात्मा का ही प्रकट रूप है।

14.5

सत्त्वं(म्) रजस्तम इति, गुणाः(फ्) प्रकृतिसम्भवाः।
निबध्नन्ति महाबाहो, देहे देहिनमव्ययम्॥14.5॥

हे महाबाहो! प्रकृति से उत्पन्न होने वाले सत्त्व, रज (और) तम – ये (तीनों) गुण अविनाशी देही (जीवात्मा) को देह में बाँध देते हैं।

विवेचन :- सत्व, रज और तम यही तीन गुण हैं। गुण यानी, जैसे पानी ऊंचाई की तरफ से नीचे की तरफ को बहना, यह पानी का गुणधर्म है। वैसे ही इन तीन गुणों के कुछ धर्म है। संस्कृत में गुण रस्सी को कहते हैं। रस्सी बांधने का काम करती है। इसलिए यह तीन रस्सियां हैं, क्योंकि यह जीवात्मा को बांध कर रखती हैं। यह मैं हूं, या यह मेरा देह है। मेरा देह है कहने वाला, मैं देह का मालिक हो गया।
देहिन - जो देह में रहता है। मैं देह नहीं हूं, मैं देह में रहता हूं। उसे जीवात्मा कहा गया है। जीवात्मा अव्यय है, उसका व्यय नहीं होता। देह कम हो जाता है, समाप्त हो जाता है। किन्तु जीवात्मा कम नहीं होता, वह कभी समाप्त नहीं होता। ऐसे अव्यय अविनाशी जीवात्मा को यह तीनों गुण बांध के रखते हैं यह तीन गुण भी प्रकृति से ही निर्मित हैं। यह गुण माया के हैं। यह प्रकृति त्रिगुणात्मक है- तीन गुणों वाली है। संसार का सबसे सूक्ष्म कण जो होता है। उसे परमाणु कहते हैं उसके अंदर तीन कण रहते हैं। इलेक्ट्रॉन, न्यूट्रॉन और प्रोटॉन। इन तीनों के भी तीन गुण धर्म है। सत्व, रज, तम इन तीन गुणों के अतिरिक्त प्रकृति का कुछ भी नहीं है। प्रकृति इन तीन गुणों की ही है, और यह गुण भी प्रकृति के ही हैं। यह गुण ही इस अविनाशी जीवात्मा को बांध कर रखते हैं।

14.6

तत्र सत्त्वं(न्) निर्मलत्वात्, प्रकाशकमनामयम्।
सुखसङ्गेन बध्नाति, ज्ञानसङ्गेन चानघ॥14.6॥

हे पाप रहित अर्जुन! उन गुणों में सत्त्वगुण निर्मल (स्वच्छ) होने के कारण प्रकाशक (और) निर्विकार है। (वह) सुख की आसक्ति से और ज्ञान की आसक्ति से (देही को) बाँधता है।

विवेचन: इन तीन गुणों में सत्व गुण सबसे निर्मल है, पवित्र है, और अच्छा है। परंतु अच्छा है फिर भी वह बांधकर रखता है। सत्व गुण ज्ञान का प्रकाश देने वाला है। इसमें कोई विकार नहीं है। यह सच्चा है, यह ज्ञान मय है, किंतु फिर भी यह मनुष्य को बांधकर रखता है। सत्वगुण में सुख की शक्ति होती है। परंतु जब ज्ञान प्राप्त हो जाता है, तो मनुष्य उसी ज्ञान के सुख में डूब जाता है। उसे लगता है कि मैं बहुत सुखी हूं। अब मुझे कुछ नहीं चाहिए। जो मैं प्राप्त करना चाहता था, अब मुझे सब कुछ मिल गया है और यह बात भी सही है कि ज्ञान प्राप्त होने पर जो सुख मिलता है, वह कभी समाप्त नहीं होता। और जो भौतिक सुख होते है, वह मिलते हैं और समाप्त हो जाते हैं। परंतु ज्ञान का सुख कभी समाप्त नहीं होता। इसलिए मनुष्य हमेशा उसी सुख में डूबा रहता है। किंतु कई बार थोड़ा सा ज्ञान प्राप्त होने पर ही मनुष्य को लगता है कि अब मुझे सब कुछ ज्ञान है, अब मैं सब जानता हूं और मैं ज्ञानी हूं, उसे यही अहंकार हो जाता है। इसलिए वह थोड़ा सा ज्ञान प्राप्त करते ही अहंकार के बंधन में बंध जाता है। भगवान अर्जुन को **अनघ** के रूप में संबोधित करते हैं। **अनघ** का तात्पर्य है **निष्पाप**। अर्जुन का हृदय निष्पाप है, निष्कलंक है और उसका मन बिल्कुल साफ है। भगवान कहते हैं - हे अर्जुन ! सत्व गुण भी अच्छा है, निर्मल है, ज्ञान देने वाला है। लेकिन थोड़ा सा ज्ञान प्राप्त होते ही मनुष्य उस ज्ञान के अहंकार में आ जाता है, और सुख के अहंकार के बंधन में बंध जाता है। उसका कार्य रुक जाता है, और इसलिए ज्ञान प्राप्त होना बंद हो जाता है।

14.7

रजो रागात्मकं(म्) विद्धि, तृष्णासङ्गसमुद्भवम्।
तन्निबध्नाति कौन्तेय, कर्मसङ्गेन देहिनम्॥14.7॥

हे कुन्तीनन्दन! तृष्णा और आसक्ति को पैदा करने वाले रजोगुण को (तुम) रागस्वरूप समझो। वह कर्मों की आसक्ति से देही जीवात्मा को बाँधता है।

विवेचन :- रजोगुण की विशेषता है कि वह मनुष्य को बहुत दौड़ाता है। उसका एक ही कार्य है कर्म करते रहना और दौड़ना। होता भी यही है कि जो कर्म करते रहते हैं उनका ही बोलबाला होता है। इसलिए रजोगुण के कारण बड़े-बड़े कार्य होते हैं, और उनका बोलबाला रहता है। किंतु वह भी बंधन में ही पड़े होते हैं। उनको समझ नहीं आता मनुष्य रजोगुण के कारण आसक्त हो जाता है। उसकी इच्छाएं बढ़ती जाती हैं और वह इन इच्छाओं के पीछे दौड़ता जाता है। उसकी कामनाएं बढ़ती जाती हैं। आसक्ति से ही कामनाएं निर्माण होती हैं और उसी कामना पूर्ति के लिए मनुष्य दौड़ता रहता है, कर्म करता रहता है। जैसे यह गाड़ी ले ली, अब नए मॉडल की गाड़ी चाहिए। फिर उसके लिए धन चाहिए। फिर वह और कर्म करता है, और दौड़ता है। फिर उसे और इच्छाएं पैदा हो जाती हैं कि यह भी लेना है, वह भी लेना है, फिर वह दौड़ता रहता है और बड़े-बड़े कार्य करता रहता है। अच्छे कार्य भी करता है। लेकिन इतने कार्य में फंस जाता है कि उसकी तृष्णा कभी खत्म ही नहीं होती है। वह कभी भी तृप्त नहीं हो पाता। सत्वगुणी मनुष्य हमेशा तृप्त होकर बंधन में बहता है। रजोगुण मनुष्य अतृप्त होकर भी बंधन में बंधा रहता है। इसकी इच्छाएं, आकांक्षाएं, कामनाएं बढ़ती ही जाती हैं। जैसे जैसे रजोगुण बढ़ता है, वैसे कामनाएं बढ़ती हैं। और वह देह को कर्म के बंधन में डालता रहता है, और उसे कर्म करने के लिए मजबूर कर देता है। जैसे परमाणु मे क्या-क्या होता है इलेक्ट्रॉन, न्यूट्रॉन और प्रोटॉन होते हैं। न्यूट्रॉन गोल गोल घूमते रहते हैं, प्रोटॉन उनको बाहर नहीं जाने देने का कार्य करते हैं प्रोटोन मतलब ज्ञान। तमोगुण उन्हें रोकते हैं।
ज्ञानेश्वर महाराज जी का कथन है कि—

मनुष्य में एक आशा होती है। यही आशा नाम की सांकली मनुष्य को बांध के रखती है। यह श्रृंखला है, उससे भी मनुष्य बंधन में आता है। यह इच्छाओं के कारण बनती हैं। इसके कारण मनुष्य कामनाएं, इच्छाएं लेकर दौड़ता है, क्योंकि वह उसके बंधन में बंधा होता है। किंतु आशा छोड़ दी तो वह पंगु बन जाता है, वह भी अच्छा नहीं है। रजोगुण के कारण मनुष्य अपने साध्य और साधक का गुण खो बैठता है। उसको पता ही नहीं होता है कि वह क्या प्राप्त करने आया है। मनुष्य जन्म उसको क्यों मिला है, और यहां आकर उसका क्या ध्येय है। यह सारी बातें छोड़कर भौतिक सुखों के पीछे दौड़ने लगता है। वैसे उसे दौड़ना तो चाहिए, उसकी भौतिक प्रगति भी होनी चाहिए, लेकिन कब रुकना है यह भी पता होना चाहिए।

जैसे एक कार होती है। वह कैसे चलती है। उसे रोकने के लिए क्या होता है। कार के लिए इंजन भी आवश्यक है और पेट्रोल भी आवश्यक है। इंजन में पेट्रोल डाल दिया तो कार चलती है। लेकिन यह पर्याप्त नहीं है। इंजन भी है, पेट्रोल भी है। यदि कार को योग्य दिशा नहीं मिली तो कहीं भी इधर उधर जा सकती है। इसलिए उसको स्टेयरिंग की आवश्यकता होती है। सतोगुण हमें दिशा देने वाला, मार्गदर्शन करने वाला स्टेयरिंग ही है। लेकिन इसके साथ रजोगुण नहीं हैं तो यह कोई कार्य नहीं कर सकता। तमोगुण नहीं है तो उन्हें रोकने का कार्य नहीं हो सकता। इसलिए यह तीनों ही गुण आवश्यक हैं। कार को रोकने के लिए ब्रेक भी जरूरत है और यह तमोगुण ब्रेक के जैसा है। यह उस को रोकता है। हम लोग दिन भर काम करते हैं। लेकिन विश्राम के लिए रात भी होनी चाहिए और तमोगुण की मदद से हम नींद ले सकते हैं। रजोगुण के कारण हम कार्य करते हैं। सत्व गुण के कारण हमारा विवेक जागृत रहता है। परंतु फिर भी यह तीनों गुण बंधन में डालते हैं।

14.8

तमस्त्वज्ञानजं(म्) विद्धि, मोहनं(म्) सर्वदेहिनाम्।
प्रमादालस्यनिद्राभि:(स्), तन्निबध्नाति भारत॥14.8॥

और हे भरतवंशी अर्जुन! सम्पूर्ण देहधारियों को मोहित करने वाले तमोगुण को (तुम) अज्ञान से उत्पन्न होने वाला समझो। वह प्रमाद, आलस्य और निद्रा के द्वारा (देह के साथ अपना संबंध मानने वालों को) बाँधता है।

विवेचन :- यदि सतगुण ज्यादा बढ़ जाता है, तो मनुष्य अहंकार के अंधकार में डूब जाता है और यदि रजोगुण बढ़ जाता है तो वह कर्म के बंधन में बंध जाता है। और बहुत से कर्म करने लगता है तो वह भी उसके बन्धन में आ जाता है। तमोगुण का निर्माण अज्ञान के कारण होता है। तम यानि अन्धकार, वह सबको मोहित कर देता है। जैसे कार को चलाने के लिए स्टेयरिंग की आवश्यकता है, वैसे उसे रोकने के लिए ब्रेक भी तो होनी चाहिए। जब हम अपने स्थान पर पहुंच गए हैं और हमें रुकना है, तो उसे रोकने के लिए ब्रेक भी तो होना चाहिए। तमोगुण एक ब्रेक जैसा है उसे रोकने के लिए। हम दिन भर कार्य करते हैं, अच्छा काम करते हैं, लेकिन रात को विश्राम भी तो होना चाहिए तो हमें तमोगुण की मदद से नींद आ जाती है। तमोगुण के कारण हमें

नींद आती है, रजोगुण के कारण हम कार्य करते हैं, और सत्वगुण के कारण हमारा विवेक जागृत रहता है। फिर भी यह तीनों गुण बंधन में डालते हैं। तमोगुण सबको मोहित कर देता है, और इसके कारण प्रमाद, आलस्य होता है, फिर उसके कारण गल्तियां होने लगती हैं। यह अज्ञान के कारण होता हैं। आलस्य के कारण नींद आती है और कुछ न करने का मन करता है। यह प्रवृत्ति मनुष्य के तामसिक गुण के कारण बढ़ती है। प्रमाद, आलस्य, निद्रा, इन तीन बातों में भी मनुष्य बंध जाता है। इसके कारण गल्तियां होने लगती है। नींद आती है, और इसी प्रकार यह सारे देहधारियों को बांध कर रखता है।

14.9

सत्त्वं(म्) सुखे सञ्जयति, रजः(ख्) कर्मणि भारत।
ज्ञानमावृत्य तु तमः(फ्), प्रमादे सञ्जयत्युत॥14.9॥

हे भरतवंशोद्भव अर्जुन! सत्त्वगुण सुख में (और) रजोगुण कर्म में लगाकर (मनुष्य पर) विजय करता है। परन्तु तमोगुण ज्ञान को ढककर एवं प्रमाद में लगाकर (मनुष्य पर) विजय करता है।

विवेचन :- सत्वगुण सुख में मनुष्य को अहंकार में डुबाकर रखता है। उसे लगता है मैं सुखी हूँ , मुझे सब कुछ मिल गया है। मुझे ज्ञान प्राप्त हो गया है, मैं ज्ञानी बन गया हूं, मैं गीता सीख गया हूं। उसे यही लगता है कि वह ज्ञानी हो गया है और वह उसी में अटक जाता है और जिस क्षण मनुष्य को लगता है कि मुझे सब कुछ मालूम है उसका ज्ञान प्राप्त होना उसी समय बंद हो जाता है। यदि लगता है कि मैं ज्ञानी हो गया हूं तो उसे आगे का ज्ञान प्राप्त नहीं हो सकता। और यही ज्ञान उसे अहंकार के बंधन में डालता है। रजोगुण कर्मों में बांध के रखता है, और उसे कर्म करने के लिए मजबूर करता है और तमोगुण ज्ञान को ढक कर रखता है और तमोगुण के कारण ज्ञान का प्रकाश प्राप्त नहीं हो सकता और उसके कारण गलतियां होती हैं, आलस्य बढ़ता है, और निद्रा बढ़ती है। परंतु नींद भी जरूरी है। कर्म करना भी आवश्यक है, परंतु यह कितना होना चाहिए। भौतिक प्रगति भी होनी चाहिए। यह भी आवश्यक है, लेकिन कहां पर कितना कार्य करना चाहिए, उसके लिए विवेक भी जागृत होना चाहिए और यह कार्य सत्वगुण करता है। परंतु सत्वगुण में एक ही दोष है कि वह ज्ञान के अहंकार के बंधन में डालता है। तीनों गुणों में सत्वगुण सबसे अच्छा है परंतु मेरे अंदर कौन सा गुण कार्य कर रहा है, यह मुझे पता होना चाहिए। क्या मैं सात्विक हूं? क्या मैं राजसी हूं? या मैं तामसी हूं? यह भी मुझे पता होना चाहिए।

14.10

रजस्तमश्चाभिभूय, सत्त्वं(म्) भवति भारत।
रजः(स्) सत्त्वं(न्) तमश्चैव, तमः(स्) सत्त्वं(म्) रजस्तथा॥14.10॥

हे भरतवंशोद्भव अर्जुन! रजोगुण और तमोगुण को दबाकर सत्त्व गुण बढ़ता है, सत्त्व गुण और तमोगुण को दबाकर रजोगुण (बढ़ता है) वैसे ही सत्त्वगुण (और) रजोगुण को दबाकर तमोगुण (बढ़ता है)।

विवेचन :- रजोगुण और तमोगुण को दबाकर सत्वगुण बढ़ता है। रजोगुण और सत्व गुण को दबाकर तमोगुण बढ़ता है। तमोगुण और रजोगुण को दबाकर सत्वगुण बढ़ता है। यह तीनों गुण एक दूसरे को दबाकर ऊपर उठने का कार्य करते हैं। स्वयं ऊपर आने का प्रयास करते रहते हैं। कभी सत्वगुण ऊपर आता है और रजोगुण और तमोगुण को दबा देता है। कभी रजोगुण और सत्वगुण को दबाकर तमोगुण ऊपर आता है और कभी सत्वगुण और तमोगुण को दबाकर रजोगुण ऊपर आता है। प्रातः काल के समय, सुबह उठते हैं और स्नानादि करके योगाभ्यास करते हैं। उस समय हमारा सत्वगुण अधिक प्रभावी होता है, हमारा विवेक अधिक प्रभावी होता है। फिर जैसे जैसे दिन शुरू होता है, सूरज ऊपर आने लगता है, फिर हम अपने कार्य करने लगते हैं। फिर हमें सभी काम याद आने लगते है, और हम भाग भागकर सारे काम करने लगते हैं, तो उस समय रजोगुण प्रभावी हो जाता है। सत्वगुण नीचे हो जाता है। रजोगुण प्रभावी होता है तो मनुष्य से कार्य करवाने लगता है। फिर वह थक जाता है तो तमोगुण अपना प्रभाव दिखाने लगता है और फिर नींद आने लगती है और आलस्य आने लगता है, फिर कोई भी काम करने का पता ही नहीं चलता। इसलिए दिन के समय के अनुसार गुण भी अलग होते जाते हैं। पर मुख्य बात यह है कि कोई भी एक गुण दो अन्य गुणों को दबाकर ऊपर आने का प्रयास करता है।

14.11

सर्वद्वारेषु देहेऽस्मिन्, प्रकाश उपजायते।
ज्ञानं(म्) यदा तदा विद्याद्, विवृद्धं(म्) सत्त्वमित्युत॥14.11॥

जब इस मनुष्य-शरीर में सब द्वारों (इन्द्रियों और अन्तःकरण) में प्रकाश (स्वच्छता) और विवेक प्रकट हो जाता है, तब यह जानना चाहिये (कि) सत्त्वगुण बढ़ा हुआ है।

विवेचन :- भगवान कहते हैं कि हमारा कौन सा गुण बढ़ा हुआ है यह हमें स्वयं ही देखना है। यह कोई दूसरा नहीं देख सकता। ज्ञान की व्याख्या है कि स्वयं में स्वयं को जानना है। स्वयं में कौन सा गुण है जो अभी प्रवृत्त हो गया है। यह भी हमें देखना हैं। संसार के विषयों को हम जहां से ग्रहण करते हैं, वह हमारे लिए दरवाजे हैं। हम आंखों से देखते हैं तो उस दृश्य को हम ग्रहण कर लेते हैं और कानों से शब्द ग्रहण करते हैं। जिह्वा से हम चखते हैं। खट्टा है, मीठा है, या कड़वा। इन्हीं द्वारों की वजह से ही हम सारे विषयों के बारे में जानते हैं और यह विषय इन द्वारों के द्वारा ही हमारे शरीर के भीतर प्रवेश करते हैं। इसलिए सारे द्वारों में प्रकाश हो जाता है और इससे हमें मार्ग दिखने लगता है। इससे इन सारी इंद्रियों को मार्ग का पता चलता है, कि क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए। आंखों को क्या देखना चाहिए और कानों को क्या सुनना चाहिए और जिह्वा को क्या खाना चाहिए, या क्या नहीं खाना चाहिए, यह उन्हें ही ज्ञात होता है। इसलिए कहा जाता है कि सत्व गुण बढ़ गया है और यही उनके स्वभाव बन जाते हैं कि जो नहीं देखना चाहिए, वो आंखें नहीं देखती हैं और जो नहीं सुनना चाहिए, वह कान नहीं सुनते हैं। जो नहीं खाना चाहिए, वह जिह्वा नही खाती है। जब यह इंद्रियां समझने लगती हैं, तो हमें समझना चाहिए कि सत्वगुण बढ़ गया है। मधुमेह की बीमारी है, मीठा नहीं खाना चाहिए। तो जिह्वा बोलती है कि मीठा नहीं खाना है, तभी समझना चाहिए कि यह सत्वगुण है। जैसे दीपक के सामने अंधकार नहीं हो सकता। सूर्य भगवान को भी मालूम नहीं है कि अंधकार क्या है और जब सत्वगुण बढ़ता है तो इंद्रियां कोई भी कार्य ऐसा नहीं करती हैं, जो सत्वगुण को अच्छा नहीं लगता। सत्वगुण में अहंकार का ही बंधन होता है। यह अच्छेपन का अहंकार ही हमें अंतिम सत्य तक पहुंचने नहीं देता। यह तीनों गुणों से अतीत हमारा स्वरूप है।

14.12

लोभः(फ्) प्रवृत्तिरारम्भः(ख्), कर्मणामशमः(स्) स्पृहा।
रजस्येतानि जायन्ते, विवृद्धे भरतर्षभ॥14.12॥

हे भरतवंश में श्रेष्ठ अर्जुन! रजोगुण के बढ़ने पर लोभ, प्रवृत्ति, कर्मों का आरम्भ, अशान्ति और (स्पृहा) – ये वृत्तियाँ पैदा होती हैं।

विवेचन :- जब हमारा रजोगुण बढ़ता है तो हमें लगता है कि हमें हर चीज और भी चाहिए, इस समय हमारा लोभ बढ़ जाता है। हमारी लोभ की प्रवृत्ति बढ़ती है, तो हमें और कर्म करने की आवश्यकता होती है। इच्छा बढ़ती है, और यह लोभ रजोगुण के कारण होता है। जब मुझे लगता है कि मुझे यह नहीं लेना चाहिए, या मुझे यह नहीं खाना चाहिए। तो उस समय मेरा सत्वगुण कार्य कर रहा होता है। मेरी इच्छा बढ़ रही है मेरा लोभ बढ़ रहा है तो इसका तात्पर्य रजोगुण बढ़ रहा है। जब हमारा रजोगुण बढ़ता है तो हम अशांत हो जाते हैं और दौड़ने लगते है, कि यह करना है, या वह करना है। इच्छा दिमाग की वह स्थिति है जो हमेशा खाली रहती है। एक इच्छा पूरी हो गई, अब दूसरी पूरी करो, फिर दूसरी हो गई, फिर तीसरी पूरी करो। तब हमें सोचना चाहिए कि अब हमारा रजोगुण कार्य कर रहा है। लेकिन दुनिया में रजोगुण का ही बोल बाला है। रजोगुण का सबसे बड़ा उदाहरण रावण है। उसने सब कुछ प्राप्त किया। सोने की लंका बना दी, और सब कुछ बहुत अच्छा कर दिया। कुबेर को लूट कर उसकी नगरी भी प्राप्त कर ली। प्रमाण तो रावण का ही था। रावण के तीनो भाई सत्वगुण, रजोगुण, और तमोगुण के उदाहरण हैं। रावण रजोगुण का उदाहरण है। यह मिल गया अब वह चाहिए। सुंदर पत्नी मिल गई, अब दूसरी चाहिए। यही इच्छा उसकी रजोगुण के कारण थी। विभीषण सत्वगुण का प्रतीक है। वह जानता है कि ऐसा नहीं होना चाहिए। इसलिए वह प्रभु की शरण में आता है। और तमोगुण का प्रतीक कुंभकर्ण है। सोया है तो सोया ही है। उठेगा तो किसको मारूं या न मारूं यही सोचता है। हम में भी यह तीनों गुण है परंतु कौन सा गुण किस समय प्रभावी होता है। यही सीखने के लिए हमे प्रयत्नशील रहना चाहिए।

14.13

अप्रकाशोऽप्रवृत्तिश्च, प्रमादो मोह एव च।
तमस्येतानि जायन्ते, विवृद्धे कुरुनन्दन॥14.13॥

हे कुरुनन्दन! तमोगुण के बढ़ने पर अप्रकाश, अप्रवृत्ति तथा प्रमाद और मोह – ये वृत्तियाँ भी पैदा होती हैं।

विवेचन :- जब तमोगुण बढ़ जाता है तो अज्ञान का अंधकार हो जाता है। अज्ञान जब बढ़ता है तो कुछ करने की इच्छा नहीं होती है। आलस्य बढ़ जाता है। क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए, कुछ समझ नहीं आता है। जब ऐसी प्रवृत्ति होती है कि कुछ भी करने लगते हैं, तो गल्तियां बढ़ती हैं और अंतःकरण में मोह का निर्माण होता है। मोह बढ़ता जाता है। मनुष्य कर्म करने के लिए उठता है, परंतु फिर तमोगुण के कारण सो जाता है। आलस्य की ऐसी अवस्था तमोगुण के कारण ही होती है। सबसे पहले इन तीन गुणों के बंधन से छूटना है। यदि तमोगुण से छूटना है तो आलस्य को दूर करना पड़ेगा, काम करना पड़ेगा, इससे आलस्य हटेगा। आलस्य को छोड़कर एकदम जब मनुष्य उठता है तो आलस्य भाग जाता है। यह राजस्व गुण का आश्रय लेकर ही हो सकता है। फिर सत्वगुण की वृद्धि और ज्ञान प्राप्त करने के लिए भगवद्गीता पढ़ना, योगाभ्यास करना श्रेयस्कर है। उससे सत्वगुण बढ़ता है और वह रजोगुण को भी वश में रखता है। इस प्रकार से एक एक गुण पर विजय प्राप्त करते जाना है। तमोगुण के बंधन को तोड़ना सबसे कठिन है। उसे तोड़कर रजोगुण में आना, रजोगुण का बंधन तोड़कर सत्वगुण में आना, इसके लिए हमे सत्वगुण को प्रभावशाली करने का प्रयास करना पड़ेगा, और धीरे-धीरे सत्वगुण का बंधन भी छोड़ देना पड़ेगा। उसके पश्चात् मनुष्य गुणातीत बन सकता है। लेकिन भगवान कहते हैं कि मनुष्य की मृत्यु भी होती है। शरीर नष्ट होते समय कौन सा गुण प्रभावी रहते हुए मृत्यु आती है, तो वह कहां जाता है। उसके आगे की गति कहां होती है। सत्वगुण बढ़ा है, तब मृत्यु आती है तो मनुष्य कहां जाता है। और रजोगुण बढ़ने पर मनुष्य कहां जाता है। और तमोगुण में मनुष्य कहां जाता है इन सबका वर्णन भगवान ने आगे के श्लोकों में किया है।

इस प्रकार आज का विवेचन सत्र सम्पूर्ण हुआ।

ॐ **श्री कृष्णार्पणमस्तु** ॐ

इसके बाद प्रश्नोत्तर सत्र का आरंभ हुआ-

प्रश्नकर्ता :- अमृता दीदी

प्रश्न :- सत्वगुण की वृद्धि करने के लिए क्या करना चाहिए ?

उत्तर :- सत्वगुण की वृद्धि के लिए पहले तमोगुण को समाप्त करना चाहिए। किन्तु सत्वगुण में भी एक धोखा है, क्योंकि उसे लगता है कि मैं बहुत सात्विक हूं। मैं बहुत अच्छा हूं। यही अच्छेपन का उसको अहंकार हो जाता है और वह इसी तरह तमोगुण में चला जाता है। उसे पता भी नहीं चलता। स्वामी विवेकानंद जी ने कहा है कि उनका देश इतने ध्यान का देश है, उसका नाम ही भारत है- भा का तात्पर्य है प्रभा यानी प्रकाश। उसने संपूर्ण विश्व में प्रकाश फैलाया। किन्तु इस देश के लोगों को सत्वगुण की अधिकता से यह अनुभव होने लगा कि हम सबसे अच्छे हैं। वे आलस्य में डूब गए, तो हमारा देश अंधकार में डूब गया, अज्ञान में डूब गया। ज्ञान का देश होते हुए भी हम किसी के अधीन क्यों हो गए, क्योंकि हम अपने सुख में डूब गए थे। यही सत्वगुण का धोखा होता है।

प्रश्न :- सत्वगुण बढ़ाने के लिए हमें क्या करना चाहिए ?

उत्तर :- उसके लिए हमें जल्दी उठना चाहिए। प्रातःकाल सूर्य उदय के पहले उठना चाहिए। सूर्योदय के बाद मनुष्य जितना देर से उठता है उतना ही आलस्य बढ़ता जाता है। वह कितनी भी देर तक सोता है, पर उसे लगता है कि उसकी नींद पूरी नहीं हुई है। लेकिन जो सुबह जल्दी उठता है वो बहुत उत्साहित रहता है। शुरू में हमें लगेगा परंतु फिर धीरे धीरे उसे आदत हो जाती है

तो यही सत्वगुण का लक्षण है। सुबह उठते ही ज्ञान प्राप्ति करने से तमोगुण चला जाता है। तमोगुण को भगाने के लिए सुबह जल्दी ही उठना चाहिए। गंगा जी में सुबह स्नान करने से जो प्रसन्नता आती है वह सत्वगुण के कारण ही होता है।

प्रश्नकर्ता :- अमृता दीदी।

प्रश्न :- क्या प्याज और लहसुन खाना भी तमोगुण को ज्यादा बढ़ाता है ?

उत्तर :- आयुर्वेद में जो निषेध पदार्थ माने गए हैं उन पदार्थों के कारण हमारे गुणों में परिणाम होता है। तो क्या खाना चाहिए या नहीं खाना चाहिए और क्या खाने से कौन सा गुण बढ़ता है और कौन सा गुण बढ़ने पर क्या खाने की इच्छा होती है, यह दोनों एक दूसरे के ऊपर निर्भर है। तमोगुण बढ़ने से तामसी खाना खाने की इच्छा बढ़ जाती है, बासी खाने की इच्छा हो जाएगी। सत्वगुण बढ़ गया तो सात्विक खाने की इच्छा हो जाएगी और जब हम सात्विक अन्न नियमित रूप से खाने लगेंगे, तो सत्वगुण बढ़ने लगेगा। यह सब कुछ एक ही क्रिया है। सत्व, रज और तम गुण एक दूसरे के साथ इतने मिले हुए हैं, कि उन से छूटना कठिन होता है। लेकिन प्रयास करते रहना चाहिए। हमारा आचार - विचार और गुण, सत्वगुण को बढ़ाने वाला होना चाहिए। हम किसकी पूजा करते हैं। हमारे गुण उस पर भी निर्भर करते हैं।

प्रश्नकर्ता :- गीता दीदी ।

प्रश्न :- गीता में जो तीन रस्सियां बताई गई हैं, तमोगुण, रजोगुण और सत्वगुण। यदि हम तमोगुण और रजोगुण में रहेंगे तो क्या हमें पाप लगेगा?

उत्तर :- यहां पाप पुण्य की कोई बात नहीं है। हमें इन तीन गुणों के साथ ही रहना है। हमारा यह शरीर इन्हीं तीन गुणों से बना है। जैसे कार का इंजन है, और स्टेयरिंग भी है, परंतु ब्रेक नहीं है, तो कार चलेगी क्या? और इंजन है और ब्रेक नहीं है और स्टेयरिंग है तो भी नहीं चलेगी। स्टेयरिंग भी है, ब्रेक भी है, लेकिन इंजन ही नहीं है तो क्या कार चलेगी? यह तीनों ही बातें जैसे कार के लिए आवश्यक है, वैसे ही शरीर के लिए भी यह तीनों ही गुण आवश्यक है। तमोगुण, रजोगुण को रोकता है। विश्राम भी आवश्यक है। सोएंगे नहीं तो आराम नहीं कर पाएंगे। इसलिए यह हमारे लिए यह तीनों गुण आवश्यक ही है और यह शरीर भी इन्हीं तीन गुणों का है। इन गुणों के साथ रहते हुए ही इन से आगे निकलना है। परंतु हमें सत्वगुण की तरफ ज्यादा झुकाव रखना चाहिए, क्योंकि जब सत्वगुण बढ़ता है, तो ज्ञान की वृद्धि होती है और हमारा विवेक जागता है, तो आगे का मार्ग अपने आप दिखने लगता है। यह तीनों ही गुण होने चाहिए। बिना रजोगुण के तो व्यक्ति कार्य ही नहीं कर सकता। जो प्रवृत्ति होती है और उन्नति होती है, वह तो रजोगुण के कारण ही होती है। लेकिन उसमें भी कहां रुकना है। यह पता होना चाहिए और उसके लिए अंकुश लगाने के लिए तमोगुण भी आवश्यक है। इन तीन गुणों के साथ रहते हुए भी हमें अलग ही रहना है जैसे पानी में कमल खिलता है परंतु पानी उसको नहीं चिपकता है। वैसा ही बनने का प्रयास करना है। पहले तो हमें यह देखना है कि हमारे अंदर कौन सा गुण प्रभावी है। परंतु धीरे-धीरे सत्व गुण को प्रभावी करने का प्रयास करना चाहिए। इससे ही हमें भगवान के पास पहुंचने का मार्ग मिल सकता है।

हमें विश्वास है कि आपको विवेचन की रचना पढ़कर अच्छा लगा होगा। कृपया नीचे दिए लिंक का उपयोग करके हमें अपनी प्रतिक्रिया दीजिए।

https://vivechan.learngeeta.com/feedback/

विवेचन-सार आपने पढ़ा, धन्यवाद!
हम सब गीता सेवी, अनन्य भाव से प्रयास करते हैं कि विवेचन के अंश आप तक शुद्ध वर्तनी में पहुंचे। इसके बाद भी वर्तनी या भाषा संबंधी किन्हीं त्रुटियों के लिए हम क्षमा प्रार्थी हैं।

जय श्री कृष्ण !
संकलन: गीता परिवार - रचनात्मक लेखन विभाग

हर घर गीता, हर कर गीता!
आइये हम सब गीता परिवार के इस ध्येय से जुड़ जायें, और अपने इष्ट-मित्र -परिचितों को गीता कक्षा का उपहार दें।

https://gift.learngeeta.com/

गीता परिवार ने एक नवीन पहल की है। अब आप पूर्व में सञ्चालित हुए सभी विवेचनों कि यूट्यूब विडियो एवं पीडीऍफ़ को देख एवं पढ़ सकते हैं। कृपया नीचे दी गयी लिंक का उपयोग करे।

https://vivechan.learngeeta.com/

|| गीता पढ़े, पढ़ायें, जीवन में लाये ||
||ॐ श्रीकृष्णार्पणमस्तु ||